Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 7 | ISSUE : 9 | SEPTEMBER 2021

समकालीन हिंदी साहित्य में स्त्री चित्रण : एक साहित्यिक अध्ययन

डॉ. गोपीराम शर्मा [1]

[1] सह आचार्य, हिंदी विभाग, डॉ भीमराव अंबेडकर राजकीय महाविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान.

ABSTRACT:

समकालीन हिंदी कविता में स्त्री चेतना को लेकर साहित्य लिखा जाने लगा है। यह समय भूमंडलीकरण का है। इसी कारण साहित्य में विमर्शों का दौर शुरू हुआ है। 21वीं शताब्दी से पहले स्त्री की समस्याएं साहित्य में कम ही दिखाई देती थीं परंतु अब स्त्री को लेकर एक नई राह खुली है। इसमें स्त्री स्वतंत्र होकर अपने लिए साहित्य की मांग कर रही है। वहीं दूसरी ओर वह बाजार के हाथों खेलती भी जा रही है।

समकालीन कवित्रियां जहां इस समय स्त्री की चेतना को उद्घाटित कर रही है वहीं उसे बता रही हंल कि समाज और बाजार की खतरों से भी सावधान रहने की आवश्यकता है। समकालीन हिंदी साहित्य स्त्री चेतना का चित्रण कर स्त्री जागरण का कार्य कर रहा है।

KEYWORDS:

बीसवीं शताब्दी, सशक्तिकरण, साहित्य सर्जना, विडम्बना, छिन्नतार, सतित्व, दरवाजा, औरत, मान्यता, परिधि, कन्या भ्रूण, पुरुषवादी मानसिकता, इस्पात, अस्मिता।

विषय उपस्थापन-

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में वैश्वीकरण और उत्तर आधुनिकता के फलस्वरूप पूरे विश्व में हाशिए का समाज केन्द्र में आने लगा। परिधि पर स्थित उपेक्षित जन केन्द्र की ओर अग्रसर होकर राजनीति, साहित्य और कला क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने लगा। साहित्य में विमर्शों का दौर शुरू हुआ। स्त्री विमर्श के चलते स्त्री सशक्तीकरण का नारा लगाया गया। स्त्री स्वयं लिखने लगी तथा उन अनछुए पहलुओं को सामने लाने लगी, जो अब तक पुरूष सत्तात्मक समाज के कारण दबे पड़े थे। स्त्रियों अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज की कटु सच्चाई को सामने लाने लगी। स्त्रियों द्वारा साहित्य के क्षेत्र में यह पहल इक्कीसवीं सदी की स्त्री रचनाओं में दिखाई पड़ती है।

इक्कसवीं सदी से पूर्व के साहित्य में स्त्री समस्याएँ कम उजागर होती है। मीरा, महादेवी वर्मा, सुभद्राकुमारी चौहान आदि कुछ लेखिकाओं के नाम से इस काल में गिनाए जा सकते हैं। 21 वीं शताब्दी में स्त्री लेखिकाएँ सजग रूप से साहित्य सर्जना में लगी है। इस काल की कविता में स्त्री चेतना के साथ स्त्री के सम्पूर्ण जीवन का चित्रण प्राप्त होता है। इन कविताओं में घर-परिवार, समाज के विभिन्न क्षेत्रों में स्त्रियों पर हो रहे अत्याचारों के वर्णन के साथ स्त्रियों के अपने अस्तित्व और अस्मिता को प्राप्त करने की अकुलाहट भी मुखरित होती है। समकालीन कविताओं से स्त्री मन की अभिव्यक्ति का वृहद् पाठ आरम्भ होता है, जो स्त्री की पीड़ा, विडम्बना बोध, उपेक्षा बोध, संत्रास को व्यक्त करता है। समकालीन कवयित्रियों कीर्ति चौधरी, सुनीता जैन, ममता कालिया, कात्यायनी, सुधा अरोड़ा, सविता सिंह, अनामिका, निर्मला पुत्तुल, तेजी ग्रोवर, ममता किरण, निर्मला गर्ग, पद्मा सचदेव, ऋचा शर्मा, गगन गिल आदि में स्त्रीमन के थाह पाने की पुरजोर कोशिश दिखाई पड़ती है।

समकालीन स्त्री कविता में समाज का सच उतर कर आया है। स्त्री घर, परिवार तथा समाज में नित शोषण का शिकार बनती है। वह आज भी असुरक्षित है। अपनी प्रताड़ना और शोषण के विरुद्ध कभी खड़ी होने की सोचती है तो आज भी दबा दी जाती है। आदर्शवादी नारों की बात और है परन्तु पुरुष वर्चस्व समाज में स्त्री का आगे बढ़ना सहन नहीं होता। यह सच्चाई कवयित्री रंजना की पंक्तियों से स्पष्ट है-

"उन्हें चींटियों के/प्रतिवाद की भाषा तो/कतई कतई नापसंद हैं/ इसलिए जब कभी उन्हें लगता है/ चींटियों हो रही हैं / औकात से बाहर/वे उन्हें कुचलने में लग जाते हैं।"[1]

नारी की स्वतंत्रता की बात एक नारे से बढ़कर नहीं है। विडम्बना यह है कि आज भी स्त्री की निजी सोच नहीं है। यह अपनी परिस्थिति, अपने परिवेश अपने समाज के प्रति अपनी दृष्टि से विचार नहीं कर पाती। ऐसे में वह कुछ अपना सोचने की कोशिश भी करती है तो मन की स्वतंत्रता परतंत्रता देवे द्वन्द्व में उलझ कर रह जाती है। ऋचा शर्मा की पंक्तियों से स्पष्ट है-

"परकटे पंछी-सी/ लालायित देखती हूँ/ नीले आसमान की ओर उड़ने की चाह में/पंख फड़फड़ा रह जाती हैं।"[2]

समकालीन कवयित्रियाँ पिछली पीढी की अपेक्षा अधिक प्रखरता एवं तीव्रता वो साथ अपने समाज एवं उसमें हो रहे परिवर्तनों एवं क्रियाकलापों से जुड़ी है। फलस्वरूप इनकी कविताओं में स्त्री जीवन का जो वास्तविक रूप है यह स्त्री के स्वर में ही अत्यंत तल्खी एवं आक्रोश के साथ उभरा है। आज के उत्तर आधुनिक दौर में भी स्त्री का शोषण और दुरुपयोग कम नहीं हुआ। वो इस समाज में आज भी अकेली है-

"उसने अपने वजूद का एक बड़ा हिस्सा/किराये पर उठा रखा है/ दुनिया, दफ्तर, दवा-पानी/उसी आसरे चलता है/बाकी के हिस्से में कोई नहीं आता।"[3]

आज की स्त्री कविता में मनुवादी संहिता का नकार प्रकट होता है। बेटे-बेटी का भेद समाज में आज भी व्याप्त है। पुत्र चाह में लड़किया गर्भ में ही निपटा दी जाती है। यह लिंग भेद इस कविता में प्रकट होता है-

"बेटे के पालने में/झूम रहा था झुनझुना/ताकि बेटा देखे/मुस्कराये/ सिखे/ हिलते हिलते छलना/ बेटी पैदा होते ही/ जमीन पर रख दी गई/ताकि जमीन से सीखे सहनशीलता।"[4]

स्त्री तो जननी है पर जननी की कोख से जननी को जन्म लेने नहीं दिया जा रहा। जननी के प्रति श्रद्धा भाव ही लुप्त है। पुरुषों ने सदा स्त्रियों की भावनाओं से खेला है। स्त्री की अस्मिता का तो प्रश्न ही नहीं उठता। यह पुरुषवादी मानसिकता है कि स्त्रियों के प्रति गलतबयानी हर स्तर पर बदस्तूर जारी है। रंजना जायसवाल की पंक्तिया है-

"आज कक्षा में एक बच्चे ने मुझसे पूछा/छिन्नाल का अर्थ क्या है? प्रश्न के साथ ही हँस पड़ी पूरी कक्षा/रातो रात सुपर हिट हुआ है यह शब्द/भोजपुरी ही नहीं, शहरी लोगों का भी शब्द ज्ञान बढ़ा है। / इक्कीसवी सदी के सभ्य, सुसंस्कृत पुरूष की बर्बर अभिव्यक्ति से/जबकि बूंद मात्र है यह/ सामंती मानसिकता के आकाश से टपकी/अभी बरसात बाकी है /रंडी, वेश्या, छत्तीसी का समानार्थी है यह शब्द/सोचती हूँ/किसने गढ़ा होगा यह शब्द / स्त्री गरिमा के खिलाफ।"[5]

स्त्री हमेशा से परिवार के लिए जीती रही। वह पुरूष के लिए खटती मिटती रही। उसकी वेदनाओं के लिए कोई दरवाजा खुला नहीं। वर्षों तक वह अपने पिता, पति एवं बच्चों के लिए दरवाजे खोले, किन्तु दरवाजों का इतिहास किसी ने सुना नहीं। दरवाजा कविता में यह बोध प्रकट होता है-

"मैं एक दरवाजा थी/मुझे जितना पीटा गया/मैं उतनी ही खुलती गई।"[6]

यही कारण है कि स्त्री हमारे समाज में अबला बन कर रह गयी है। बेटियां तो सदा अनाथ होती है। उनके सगे माता-पिता ही उनका हक बेटों को देते हैं। हमारे परिवारों में सम्पति को लेकर बेटियों के प्रति बेईमानी और बेरूखी छुपी नहीं है। इसी भेदभाव से तंग आकर, ऊबकर स्त्री क्या सोचती है-

"राम जी, अगले जन्म हमें पेड़ बना दीजो कीट पतंग या ढोर बना दीजो/चिड़िया, दादुर, मोर बना दीजो/पर अबला का फिर साप न दीजो।"[7]

समाज में नारी के लिए दुहरा व्यवहार है। कहने और सिद्धान्त के लिए नारी देवी है। वह पूजनीय है। वह महान सती है पर 'सतीत्व के परिधि में बंधी है। आज नारी जानना चाहती है कि इस सतीत्व के मायने क्या है ? तसलीमा नसरीन की कविता 'प्रमाण-पत्र' में कहा गया है-

"सतीत्व किसे कहते है ? मैं इसकी संज्ञा पाना चाहती हूँ सतीत्व किसका नाम है/ मैं इसका रक्त मज्जा चुनकर /खाल उधेड़कर जायकेदार मांस का/ कच्चा स्वाद पाना चाहती हूँ।"[8]

आज की कविता में केवल स्त्री का दुःख-दर्द, पीड़ा का चित्रण ही नहीं है। इस काल में

लेखिकाएँ-कवयित्रियाँ नारी की वर्तमान स्थिति एवं व्यवस्था को परखती है। उनकी रचनाओं में स्त्री सशक्तीकरण को रूपायित किया गया है। कविताओं के माध्यम से स्त्री की मुक्ति की आवाज बुलंद की गई है। शोषण करने वाले समाज और पुरुष के प्रति प्रतिरोध इन कविताओं में हैं-

"मत लेना कोई परीक्षा/मेरे सब की बहुत सह लिया/अब न सहेंगे/हम अपने आपको सीता न कहेंगे।"[9]

आज की स्त्री कविता में स्त्री अस्मिता के साथ विद्रोह का स्वर है। प्राचीन बुराइयों की कारा तोड़ने की इच्छा एक कन्या भ्रूण अपनी माँ से रख रहा है-

"ठुकरा दो वो सब कुरीतियां / जडता से ग्रसित समाज की / बाधक जो मेरे जीने की अधिकार की।"[10]

नारी को भोग्या मानने वालों को आज नारी ललकारती है। यह अब वस्तु बनकर नहीं जियेगी। नारी न केवल खुद अत्याचारों का प्रतिकार कर रही है बल्कि आने वाली पीढ़ियों को बचाना चाहती है। कविता कहती है-

"मेरी अगली पीढ़ियो/ इस प्रकार नहीं उठाएंगी व्यथा का भार/जो मैने उठाया।"[11]

आज स्त्री सशक्तीकरण के फलस्वरूप स्त्री अपने आप को जान रही है तथा स्वयं की स्वतंत्र अस्मिता और अस्तित्व की मांग कर रही है। सदियों से स्त्री चिंतन पर पुरूषवादी विचार हावी रहा है। वह हमेशा पिता, पति एवं पुत्र के नियंत्रण में बताई गयी। आज स्त्री अपनी पहचान पिता, पति से नहीं, स्वयं के अस्तित्य के आधार पर देखना चाहती है। यह पुरूष प्रधान समाज को चुनौती देते हुए कहती है-

"मैं किसी की औरत नहीं हूँ मैं अपनी औरत हूँ/ अपना खाती हूँ में किसी की मार नहीं सहती/ और मेरा कोई परमेश्वर नहीं।"[12]

स्त्री उन सारी पुरानी मान्यताओं को नकारती है जो उसके शोषण का कारण बन रही है। शिक्षा पाकर तथा अपने पैरों पर खड़ी होकर अपनी जाति में शक्ति का संचार कर रही है। आज की स्त्री अपने कोमलांगी न कहलाकर, अबला का लेबल उतार कर मजबूत इरादों से शोषण की सम्पूर्ण कहानियों को पलट देना चाहती है-

"इक्कीसवी सदी की यह औरत/हाड़-मांस की नहीं रह जाती/इस्पात में ढल जाती है और समाज का/ सदियों पुराना/ शोषण का इतिहास बदल डालती है।"[13]

निष्कर्ष

स्पष्ट है कि आज की कविता में जो स्त्री लेखन हो रहा है. उसमें अधिक संजीदगी से स्त्री को देखा गया है। इसमें स्त्री न केवल अपनी पीड़ा और अपनी समस्याओं को उघाड रही है, साथ ही उनका मुकाबला करने का जज्बा भी उद्घाटित कर रही है। स्त्री केवल प्रतिरोध जगाने पर संतुष्ट नहीं, वह रचनात्मक रूप से आगे बढ़ना चाहती है। यह साहित्य स्त्री की अस्मिता और उसके अस्तित्व से जुड़े मुद्दों को स्त्री भाषा में प्रकट करता है। अतः स्त्री को समझने की दृष्टि से यह लेखन अधिक सक्षम सिद्ध होता है।

REFERENCES

1. रंजना - चींटियां, स्त्री मुक्ति का सपना (सं. राजेन्द्र शर्मा), पृष्ठ-188

2. ऋचा शर्मा - इक्कीसवीं सदी की हिन्दी स्त्री कविताः आशय और अभिव्यक्ति, सं. संतोष टेलकीकर, क्वालिटी बुक्स पब्लिशर्स, कानपुर, पृष्ठ-32

3. अनामिका- बीजाक्षर (काव्य संग्रह), पृष्ठ-44

4. वर्तिका नन्दा- हसरतें, नया ज्ञानोदय, सितम्बर 2012, पृष्ठ-46

5. रंजना जायसवाल- एक बयान के बाद, आउटलुक (साहित्य विशेषांक), जनवरी 2011 पृष्ठ-62

6. अनामिका - दरवाजा, दूब धान (संग्रह), Kavitakosh.org

7. सुनीता जैन- तरूणी, खाली घर में (संग्रह), 2007 ई., पृष्ठ-17

8. मुनमुन सरकार (अनुवादक) - तसलीमा नसरीन की कविताएँ, पृष्ठ-40

9. सीमा सचदेव - नारी परीक्षा, sahityakunj.net

10. श्रीमती मिथलेश जैन - थामों नहीं मेरी गति, अनचाहीं, पृष्ठ-25

11. स्नेहमय चौधरी - कुंती का आरोप, समकालीन साहित्य समाचार, सितम्बर 2011, पृष्ठ-12

12. सविता सिंह - मैं किसकी औरत हूँ, आउटलुक (साहित्य विशेषांक), जनवरी 2011, पृष्ठ-56

13. सुधा अरोड़ा - शतरंज के मोहरे, इक्कीसवीं सदी की हिन्दी स्त्री कविता : आशय और अभिव्यक्ति (सं. संतोष टेलकीकर), पृष्ठ-45